THE RICH CULTURAL PAST OF INDIA : CONCERNS AND DEMYSTIFICATION OF REALITIES

भारत का समृद्ध सांस्कृतिक अतीत : चिंताएँ एवं वास्तविकताओं का रहस्योद्घाटन

National Seminar

on

The Rich Cultural Past of India : Concerns and Demystification of Realities

19-20 August, 2023

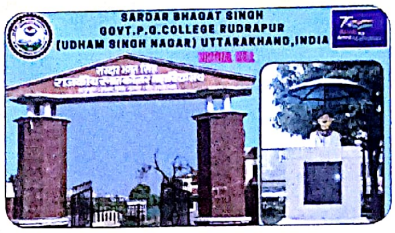

Organized By:

Department of Sociology,
Sardar Bhagat Singh Govt. P.G. College
Rudrapur (U.S.Nagar), Uttarakhand.
(Affiliated to Kumaun University, Nainital)

Sponsored By:

Indian Council of
Social Science Research

Indian Council of Social Science Research (ICSSR), New Delhi.

VIVEK
PRAKASHAN

Dr. Anchalesh Kumar

18

कुमाऊँनी लोक संगीत एवं गायन: एक सांस्कृतिक धरोहर

*डॉ० अपर्णा सिंह**

सारांश

उत्तराखंड का कुमाऊँ क्षेत्र अपनी समृद्ध मौखिक परम्परा को गीत और नृत्य के माध्यम से लंबे समय से सजीव बनाए हुए है. ये लोक गीत और नृत्य स्थानीय जीवन, प्राकृतिक सौंदर्य, धार्मिक आस्था यें और सामाजिक विचारों का प्रतिनिधत्व करती हैं. लोक साहित्य में उत्तराखंड का कुमाऊँ क्षेत्र "रंगीलो कुमाऊँ" की उपाधि से विभूषित किया जाता है। यहाँ जितने सुरीले लोकगीत हैं उतने ही मनोहारी यहाँ के लोकनृत्यभी हैं। ये लोक गीत स्थानीय इतिहास, संस्कृति के संवाहक है जो न केवल मनोरंजन का साधन है बल्कि इस अंचल के लोगों को नैतिक मूल्यों को जैसे पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक समरसता का भी संदेश देते हैं। कुमाऊं के नृत्य भी उसकी सांस्कृतिक धरोहर का अहम हिस्सा हैं। यहाँ किये जाने वाले नृत्य कुमाऊँ की ऐतिहासिक विजय यात्राओं के प्रतीक है या प्रकृति का आवाहन करते पुराने गुफा चित्रों से प्रभावित जिनमे हाथ में हाथ डाल कर नृत्य किया जाता हैं। इन नृत्यों में स्थानीय वस्त्र और का विशेष महत्व होती है, जो स्थानीय विरासत को सजीव रूप से दिखाता है। यह मौखिक धरोहर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पारम्परिक ज्ञान हस्तांतरित करने का भी एक सरल तरीका होते हैं कृषि और चिकित्सा सम्बन्धी पारम्परिक ज्ञान एक लम्बे समय तक मौखिक परम्परा ने ही बचाए रखा हैं।

मुख्य शब्दः—कुमाऊँ संस्कृति, धरोहर, लोक गीत, मौखिक परम्परा, लोक परम्परा
लोक नृत्य, लोक अभिव्यक्ति

प्रस्तावना

प्रकृति मनुष्य की सहचरी है। आदिम काल में जब मानव प्रजाति शैशवावस्था में थी प्रकृति के गहन सानिध्य ही उसका लालन–पालन हुआ, झरनों–नदियों की आवाजों, पशु–पक्षियों की मीठी बोली और ऋतु परिवर्तन या प्रणय बेला पर पशु–पक्षियों द्वारा कियेजाने वाले मनमोहक क्रियाओं की सरसता ने उसके मन को आनंदित किया होगा। इसी आनन्द की आवृति को अपने मन मुताबिक पाने के लिए ही उसने प्रकृति की इन विस्मित करने वाली आवाजों और भाव–भंगिमाओं को अपने जीवन में उतारने का निर्णय लिया होगा। संभवतः इसी तरह प्रथम गीत और वाद्य की रचना प्रक्रिया आरम्भ हुई होगी। भाषा की उत्पति के बाद जब उसने आवाजों को शब्दों में पिरोना सीखा होगा तब उन गीतों का स्रोत उसके आस–पास का वातावरण ही रहा होगा। लोक संगीत उन्हीं आदिम परम्पराओं को आज भी निर्वाहित कर रहा है। लोक संगीत और गायन में हम स्थानीय भूगोल, पारिस्थितिकी और परिवेश का गहरा समावेश देखते हैं।

असिस्टेंट प्रोफेसर–इतिहास विभाग, सरदार भगत सिंह राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रुद्रपुर (ऊधम सिंह नगर), उत्तराखण्ड, मोबाईल नं.-8006681086.

लोक संगीत और नृत्य किसी क्षेत्र की सांस्कृतिक विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें क्षेत्र विशेष की परम्पराओं, धर्म–विश्वास, परिधान और आभूषण आदि का प्रभाव होता है। प्राचीन काल से ही पहाड़ों पर जीवनयापन कष्टसाध्य रहा है।यहाँ की भूमि अत्यंत श्रम माँगती है। समाज में मनोरंजन के साधन दुर्लभ थे। इस स्थिति में श्रम से थके और जीवन की कठिनाईयों से जूझते मनुष्य के लिए लोकगीत तथा अनगढ़ वाद्य ही मनोरंजन का सरल–सुलभ और एकमात्र साधन थे। अपने विशेष नृत्य, मधुर गीत और वाद्यों से हिमालय पुत्रों ने अनुपम संगीत की रचना की, जो व्यक्ति की आत्मा तक को अनुप्राणित करने की क्षमता रखता है। लोक साहित्य में उत्तराखंड का कुमाऊँ क्षेत्र "रंगीलो कुमाऊँ" की उपाधि से विभूषित किया जाता है। यहाँ जितने सुरीले लोकगीत हैं उतने ही मनोहारी यहाँ के लोकनृत्य भी हैं। नृत्य के साथ विभिन्न लोक धुनों पर बजाये जाने वाले लोक वाद्य कुमाउनी संस्कृति के आयाम को विस्तार देते हैं।कुमाउनी संगीत पहाड़ के श्रमसाध्य जीवन में लोक की अभिव्यक्ति और मनोरंजन का एक सशक्त माध्यम है।

कुमाऊँ के प्रमुख लोक नृत्य

लोक नृत्य, लोगों के मन की अभिलाषाओं उनकी खुशियों और मनोरंजन की अभिव्यक्ति है। कुमाऊँ में लोक नृत्यों का आयोजन विभिन्न लोकोत्सवों, पर्वोत्सवों और देवोत्सव आदि के अवसर पर किया जाता है। नृत्य यहाँ आपसी संवाद और सामूहिक मेलजोल का एक सहज माध्यम है। समूह नृत्यों में एक दूसरे को न जानने वाले भी हाथ में हाथ डाल कर नाच उठते है। यहाँ नृत्य को केवल मनोरंजन का साधन नहीं माना जाता है बल्कि नृत्य अपने ईश्वर से संवाद करने का माध्यम भी है। नृत्य के माध्यम से देवताओं से सम्वाद करना ये दर्शाता है कि पुरातन समय से ही कुमाऊँ मंडल आध्यात्मिक और सांस्कृतिक रूप से उन्नत रहा कुमाऊँ के अधिकांश नृत्य सामूहिक शैली के हैं। डॉ. डी.डी. शर्मा कुमाऊँ के लोक नृत्यों के संबंध में कहते हैं कि लोक नृत्यों की परम्परा के सम्बन्ध में यह भी समर्वत्यहै कि ये चाहे एकल हो या सामूहिक इनका विधाता या प्रवर्तक कोई व्यक्ति विशेष नहीं होता यह स्वयंभू मानवीय प्रक्रिया की उत्पति अथवा परिणिति होते हैं। कुमाऊँ के नृत्य प्रेम, सौहार्द और वीरता के विभिन्न रसों को अपने में समाहित किये हुए हैं। कुमाऊँ के प्रमुख लोक नृत्य निम्नलिखित हैं–

छोलिया / छलिया नृत्य

छोलिया युद्ध के वाद्य यन्त्रों, युद्ध की सी वेशभूषा और युद्ध संगीत से युक्त नृत्यशैली में युद्ध का प्रदर्शन करने वाला कुमाऊँ का प्रसिद्ध लोकनृत्य है। हरिवंश पुराण के विष्णु पर्व के अंतर्गत छालिक्य क्रीड़ा नामक नृत्य का वर्णन किया गया है जिसका रूप कुछ इस प्रकार का है यद्यपि निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता हैं कि कुमाऊँनी छोलिया नृत्य का स्रोत यही है। इसके नाम के संबंध में श्री जुगल किशोर पेटशाली का कहना है, यह नृत्य युद्धभूमि में लड़ रहे शूरवीरों के वीरता मिश्रित छल का नृत्य है। छल से युद्धभूमि में दुश्मन को कैसे परास्त किया जा सकता है, यही प्रदर्शित करना इस नृत्य का मुख्य लक्ष्य है। इसी कारण इसे छल नृत्य, छलिया नृत्य, वर्तमान में छोलिया नृत्य कहा जाता है।अतः कहा जा सकता है कि छोलिया नृत्य, छलिया का ही लोक रूपांतरण है।[1] छोलिया नृत्य लगभग दो हजार साल पहले खसमाण्डलिक राजाओं की उस प्रथा के सांस्कृतिक अवशेष है, जिसमें एक राजा या सामंत दूसरे राजा की कन्या को युद्ध में जीत कर लाता था और उससे विवाह करता था। स्मृतिकार ऐसे विवाह को क्षात्र विवाह कहते है और यह विवाह क्षत्रियों के लिए सर्वोत्तम बताया गया है। छोलिया नृत्य हेतु एक या दो जोड़ी नर्तकों के अलावा, एक या दो ढोल और दमुआ वादक, एक तुरही वादक तथा एक मशकबीन वादक की आवश्यकता होती है। छोलियों का परिधान भी विशिष्ट है।

वे सिर पर सफेद रंग की पगड़ी पहनते है,जिसका एक पल्ला गर्दन पर लटका रहता है। कानों में बाली, गालों में लाली, आँखों में काजल,सफेद रंग का रंग बिरंगे बूटों और झालरदार झगुला, चूड़ीदार पायजामा, कमर में पेटी, पाँव पर चौड़ी रंगीन पट्टिया, गले में रुमाल, अंगुलियों में अंगूठिया और इनके हाथ में लोहे की तलवार और काँसे की ढाल होती है। पुरुषों द्वारा किया जाने वाला यह नृत्य स्पष्ट तौर पर सामन्ती प्रथा का संकेत देता है। **2** इस नृत्य हेतु सुप्रशिक्षित नर्तकों का होना आवश्यक है, क्योंकि इस नृत्य में भाव–भंगिमा, अंगविन्यास, पदक्रम, पदसंचार का विशेष महत्त्व है। नृत्य प्रारंभ होने पर सर्वप्रथम नर्तक तलवार व ढाल को भूमि में रख कर भूमि व गुरु को नमन करते हैं। मशकबीन की गंभीर ध्वनि से इसका प्रारंभ होता है।तत्पश्चात दमाऊँ एवं ढोल की जोश दिलाने वाली ताल के साथ सभी नर्तक एवं वाद्य यंत्र वादक गोल घेरा बनाकर घूमते नृत्य आरम्भ करते हैं। कुछ समय बाद वादक स्थिर हो जाते हैं,एक जोड़ा नर्तक ढाल तलवार से प्रदर्शन करते हुये युद्ध के अनेक कौशलों का भली–भांति नृत्य रुपान्तारण करते हैं। नृत्य के दौरान कभी हवा में उछल कर कलाबाजियां, मानव पिरामिड, सिक्के को तलवार से उठाना जैसे प्रदर्शन करते हैं। स्थिर नृत्य की दशा में वाद्य वादक नर्तकों को अर्द्ध चंद्राकार घेरा बनाते हुये घेरते हैं तथा सचल नृत्य की दशा में वादक पीछे चलते हैं एवं नर्तक आगे, केवल तुरही वादक सबसे आगे चलता है। छोलिया नृत्य के बाजगी बताते हैं कि नर्तकों को गति देने के उद्देश्य से अनेक तरह की तालें हैं, जिन्हें अलग–अलग समय के लिए नियत किया गया है। तो इस नृत्य की रफ्तार को नियंत्रित करने का काम मुख्य ढोल वादक का ही होता है। दस से पंद्रह या अधिकतम बीस लोगों की छोलिया टोली का रिवाज रहा है। लगातार नृत्य से टोली थक न जाए इसके लिए नृत्य को कुछ देर विराम देकर बीच–बीच में कुमाऊनी लोकगीतों चांचरी और छपेली के बोल भी गाये जाते हैं। माना जाता है कि पुराने समय की राजसी बारातों में वर–पक्ष वाले राजा के सैनिक युद्धकला के अभ्यास का कलात्मक प्रदर्शन करते हुए आगे–आगे चला करते थे। छोलिया को उसी परम्परा की अनुकृति कहना गलत नहीं होगा। नर्तकों की टोली के आगे सफेद और लाल रंग के ध्वजों को ले जाने की भी रिवायत रही है जिन्हें निसाण (निशान) कहा जाता है। दूर से दिखाई दे जाने वाला यह निसाण बरात के आ जाने की सूचना का काम करता था। **3**

कुमाऊँ में छोलिया नृत्य का संपादन शिल्पकार जाति के व्यक्ति करते है।छोलिया नृत्य अब संकट से जूझ रहा है क्योंकि बदलते परिवेश में युवा इस नृत्य को पेशे के तौर पर अपनाना कम पसंद करते हैं।छलिया नृत्य सिखाने हेतु पुराने समय में परम्परागत रूप से तालीम दी जाती थी,अब कुछ महीनों की तैयारी की जाती हैं। **4** शादी के एक सीजन में अगर लगातार काम मिले तो बीस से पच्चीस हजार की आमदनी हो जाती है बाकी समय मजूदरी करता हूँ। **5** एक छोलिया नर्तक लगातार प्रच्छन्न बेरोजगारी से जूझता है। वर्तमान में नृत्य और नर्तक दोनों ही अपने अस्तित्व को बचाने के लिए संघर्ष करते दिख रहे हैं।

झोड़ा

झोड़ा कुमाऊँ की सामूहिक नृत्यगीत शैली है। झोड़ा शब्द का मूल हिंदी का जोड़ या जोड़ा शब्द है।झोड़ा के लिए नेपाल में हथजोड़ा शब्द का प्रयोग होता है। इस प्रकार झोड़ा का तात्पर्य हुआ हाथों को जोड़कर या दो भागों में बँटकर अथवा जोड़े निर्मित कर सम्पादित होने वाला नृत्य है। **6** यह नृत्य उत्तराखंड की प्राचीन गुफाओं में पाए जाने वाले गुहा चित्र जिनमे हाथ में हाथ डाले मानव आकृतिया प्रमुख हैं। यह उन्ही पुरातन पुरखों के चित्रों का नृत्य रूपांतरण प्रतीत होते हैं। इसमें नर्तक हाथों में हाथ डाल कर पंक्तिबद्ध होते हुये हुड़का वादक को अर्द्धवृताकार रूप से घेरते है। झोड़े की ये पंक्तिया संयुक्त अथवा स्त्रियों व पुरुषों की पृथक–पृथक हो सकती हैं।

सर्वप्रथम हुड़कावादक गीत की एक पंक्ति गाता है और फिर नर्तक उसे दोहराते हुए पद सञ्चालन में शरीर को लहर देते हुये कुछ आगे की ओर झुक कर अपने बायें पैर को दाहिने पैर से थोडा आगे की ओर रखते हैं। फिर दाहिने पैर को आगे बढ़ाते हैं तत्पश्चात थोडा पीछे की ओर झुक कर एक कदम पीछे की ओर रखते हैं। इसी क्रम को हुड़के की थाप के साथ दोहराया जाता है। नर्तक इस नृत्य को एक,दो,तीन वृताकार पंक्ति बना कर भी सम्पादित करते हैं। जिन्हें एक तल्ला, द्वितल्ला, तीन तल्लाझोड़े कहते हैं। झोड़ा समूह का नृत्य है इसलिए जहाँ भी लोग जुड़ते हैं, वहीं इसे कर लेते हैं। झोड़े कुमाऊँ के मेलों की शान समझे जाते हैं। कुछ स्थानों पर बसंत के आगमन पर झोड़ा हर्षोल्लास का मूर्तरूप बन जाता है। अल्मोड़ा जनपद की सोमेश्वर घाटी में चैत में होली के उपरांत झोडों की छटा बड़ी मनोहारी होती है। इस नृत्य को चैती का झोड़ा कहते हैं। विवाह के अवसर पर भी झोड़ा दिखाई देता हैं।इस नृत्य का आनन्द दिन और रात दोनों में उठाया जाता है।*7* झोड़ा नृत्यों का विषय देवी–देवताओं की आराधना या प्रेम, सामायिक विषय, श्रृंगार, विनोद आदि होते हैं।

देवी–देवताओं से सम्बन्धित झोड़ा

ओहो! गोरी गंगा भागरथी को क्या भला रेवाडा
ओहो!खोल दे माता खोल भवानी धरमकेवाडा
ओहो! के त्यैरैछ भेंट बैंना म्यारा दरबारा
ओहो!द्वि जौंया बकरा ूंत्यारा दरबारा *8*

एक विनोदी झोड़ा

नैनीताल द्यौं लागी रौला
हे! नैनीताल .....
मोहन लौड नौल सिपाही
गोरु का गावा लागि रौला
हे! नैनीताल .....
मैं तो सोच्यू भर्ती हेगे
गोरु का गावा लागि रौला *9*

चाँचरी/चांचरी

कुमाऊँ में प्रचलित इस सामूहिक नृत्य को कहीं झोड़ा और कहीं चांचरी तथा कहीं खेल लगाना भी कहा जाता है। *10*

चांचरी मुख्यतः मेलों के सामूहिक नृत्यगीत हैं। विविध उत्सवों, त्योहारों, माँगलिक अवसरों पर इनका आयोजन होता है। *11*

चांचरी संस्कृत के चंचरी से उद्भूत हुआ है जिसका अर्थ है भौरां या भ्रमर या अति चंचल गति। *12*

इसमें स्त्री तथा पुरुष कमर में हाथ डालकर वृताकार घेरे में क्रमशः आगे बढ़ते हैं व पीछे हटतें हैं।

हुड़का इसका वाद्य है, इसी की थाप पर मुख्य गायक एक पंक्ति गाता है और नर्तक नृत्य करते हुए इसका कोरस करते हैं। चाँचरी प्रश्नोतर शैली में भी की जाती है। चांचरी का आरंभ ईश वंदना, मंगल वचन, आत्मपरिचय या स्त्री पुरुष के प्रेम प्रतीकात्मक नामों वाली किन्हीं पंक्तियों से हो सकता है। *13* चांचरी वैसे तो श्रृंगार प्रधान नृत्यगीत है किन्तु इसका विषय कुछ भी हो सकता है प्रेम, देशभक्ति, सामाजिक बुराई कुछ भी हो सकता है। चांचरी और झोड़ा दोनों ही काफी हद तक मिलती जुलती नृत्यगीत शैली हैं किन्तु इसमें पदक्रम व आरोह–अवरोह में अंतर होता है।

चांचरी में पद संचालन अधिक मंद होता है,स्वरों के आरोह–अवरोह में भिन्नता होती है। लय अधिक जटिल होती है तथा धुनों का खिंचाव अधिक दीर्घ होता है। ***14***

सिल्लाडीका पाल–चाल सिंगा
कलूँ फुल्या लाल, भगतसिंगा
ऊब हुनी उमर, में सिंगा
जन रियेकाल, भगत सिंगा ***15***

चाँचरी नृत्य के गीतों का विषय प्रकृति प्रेम और धार्मिक आराधना पर आधारित होता है। जैसा कि निम्नलिखित धार्मिक गीत में देखने को मिलता है –

वो जाना जाना गध्यान भगवान तिरलोकी का नाथ
ह ह देबो वो जाना गयान आव वो धनि महाराज
सिबो, देबन में देवत छन गौरिल महादेव, ह ह देबो।
वो तीरथन में तीरथ देबो गंगा लै भगीरथ
ओ हे भग्तान में भगत छन व भगत ला सुदामा, ह ह देबो।

नर्तकों का वृत्त साधारणतः बहुत विशाल होता है और इसके दो भाग होते हैं। गीत की लय विलम्बित होने के कारण सिर, गले और कटि की प्रत्येक थिरकन सुन्दरता से की जाती है और सिर झुकाकर गोता सा लगाते हुए फिर उठ जाने की क्रिया बहुत सजीले ढंग से प्रस्तुत की जाती है। इस नृत्य के सहयोगी वाद्य हैं–हुड़का और झाँझ। जिन्हें वादकों द्वारा वृत्त के अन्दर बजाया जाता है। सभी गीत गाते हैं, हुड़किये और झाँझ वादक वृत्त के नृतकों की अपेक्षा विविध भाव–भंगिमाओं एवं मुद्राओं के प्रस्तुतीकरण के लिए स्वतंत्र होते हैं। नृत्य के बीच–बीच में तालियाँ भी बजाई जाती हैं।***16***

इस प्रकार चांचरी मन में उत्साह भरने और प्रफुल्लित करने वाला नृत्य है।

छपेली

छपेली एक श्रृंगारिक युगल नृत्य शैली है। छपेली शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है क्षेपण करना अथवा फेंकना, चांचल्य और क्षिप्र गति। इसलिए छपेली चंचल या क्षिप्रता से ओत–प्रोत नृत्य है। डॉ. त्रिलोचन पाण्डे ने छपेली की विषयपरक व्याख्या करते हुए कहा है कि 'छपेली' शब्द 'छबीली' से सम्बन्ध रख सकता है। जहाँ 'छबीली' स्त्रियाँ बैठती हों या जिस गीत में 'छबीली' स्त्रियों का प्रसंग वर्णित हो, वहाँ का नृत्य गीत 'छबीली' या 'छपेली' है। कुल तैंतीस प्रकार की छपेली का आयोजन विवाह, मेलों, उत्सवों और त्यौहारों के अवसरों पर होता है। इसमें एक मुख्य गायक और एक नर्तक होता है। पहले नर्तक स्त्री होती थी किन्तु अब स्त्री का स्थान वेशधारी पुरूषों ने ले लिया है। ***17*** नर्तक हुड़का बजाता हुआ नृत्य करता है जब कि नर्तकी एक हाथ में रूमाल और दूसरे हाथ में दर्पण लिए अभिनय करती है। मेलों के अवसरों पर छपेली नृत्य को बहुत सराहा जाता है। साथ ही छोलिया नृत्य के दौरान भी छपेली गायी जाती है। नर्तक अंग संचालन और भाव भंगिमाओं से गीत की मूल भावना को अभिनय कौशल से व्यक्त करता हुआ नृत्य करता है। ***18*** यह दो प्रेमियों का नृत्य है। इसमें गायक समूह गीत गाता है। छपेली के इस गीत में कहा गया है कि पनुली चकोर के समान सुन्दरी, इतनी बड़ी दुनियां में तुम्हारे समान मधुर स्वर किसी का भी नहीं है। मैं तुम्हारे रूप को कभी नहीं भूल सकता!

जो सदियों से शिल्पकार जाति के साथ चली आ रही है. समय है कि इन कलाओं में अन्य जातियां भी भाग लें और इन्हें सम्मान की दृष्टि से देखा जाए तो लोक–संगीत एवं गायन में विशारद पाने हेतु एक लम्बे समय तक लगातार तालीम प्राप्त करनी पड़ती है पर्याप्त संसाधन न होने के कारण लम्बी तालीम से युवा पीढ़ी विमुख हो रही है। अब मौखिक शैली की ऐतिहासिक गाथाये भी खतम होती जा रही हैं. इन गाथाओं को गाने वाली और समझने वाली अब आंखिरी पीढ़ी बची हैं। इन लोक धरोहरों का दस्तावेजीकरण भी आवश्यक हैं।

संदर्भ–ग्रन्थ

1 शर्मा, डी.डी. लोक साहित्य के आयामी परिदृश्य. नई दिल्ली, तक्षशिला प्रकाशन, 2012,पृष्ठ सं.–237
2 भट्ट, दिवा. हिमालय लोक जीवन (कुमाऊँ एवं गढ़वाल). हल्दवानी, आधारशिला सोसाइटी,पृष्ठ–164
3 पाण्डेय, अशोक. https://www-kafaltree-com/chholiya&dance&of&kumaon/-2018/12/1
4 साक्षात्कार राम, दीवान. 2018 /01/14
5 साक्षात्कार राम, दीवान. 2018 /01/14
6 पोखरिया, देव सिंह. उत्तराखंड लोक संस्कृति और साहित्य, 2011, पृष्ठ सं.– 32
7 बलूनी, दिनेश चन्द्र. उत्तरांचल संस्कृति लोक जीवन इतिहास और पुरातत्व. बरेली, प्रकाश बुक डिपो, 2011,पृष्ठ–71
8 साक्षात्कार नेगी, ममता. 2016/02/ 16
9 साक्षात्कार नेगी, ममता. 2016/02/ 16
10 पोखरिया.वही.पृष्ठ– 233
11 सक्सेना, कौशल किशोर. कुमाऊँ कला शिल्प और लोक संस्कृति अल्मोड़ा:श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, 1994 पृष्ठ– 233
12 पोखरिया.वही.पृष्ठ– 37
13 पाण्डेय, त्रिलोचन. कुमाऊँनी का लोक साहित्य. अल्मोड़ा, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो,1962,पृष्ठ– 87
14 पोखरिया.वही.पृष्ठ– 54
15 जोशी, कृष्णानन्द. कुमाऊँ का लोक साहित्य, बरेली : प्रकाश बुक डिपो,1971 पृष्ठ–79
16 पोखरिया, देव सिंह. कुमाऊँनी लोक साहित्य एवं कुमाऊँनी साहित्य . अल्मोड़ा, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, 1994
17 उत्तरांचल के प्रमुख नृत्य गीत एवं नृत्य पद्यतियारू झोड़ाचांचरीछपेली और छोलिया . उत्तराखंड के लोक नृत्य . नैनीताल : युगमंच, 2006, पृष्ठ–57
18 थपलियाल, उमा प्रसाद. उत्तरांचल ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक आयाम . दिल्ली, आर. बी. पब्लिकेशन, 2005,पृष्ठ– 15
19 बलूनी.वही.पृष्ठ– 76
20 पोखरिया, देव सिंह. उत्तराखंड लोक संस्कृति और साहित्य, 2011,पृष्ठ सं.–15
21 पाण्डेय, त्रिलोचन. कुमाऊँनी का लोक साहित्य,अल्मोड़ा: श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, 1962, पृष्ठ– 94
22 लोहनी, गिरीश. काफल ट्री .https://www.kafaltree.com/uttarakhand-traditional-music-hudkiya-baul/.9/01/2019
23 पोखरिया, देव सिंह. उत्तराखंड लोक संस्कृति और साहित्य, 2011,पृष्ठ सं.– 60
24 देवदार, https://devdaar.com/category/लोकगीत/page/4/.1/04/2019.
25 बीबीसी.https://www.bbc.com/..https://www.bbc.com/news/science-environment-2012/04/18196349.25